सीता राम गुप्ता

बनाम

पंजाब राष्ट्रीय बैंक एवं अन्य

मार्च 10,2008

(तरुण चटर्जी और हरजीत सिंह बेदी, JJ.)

भारतीय अनुबंध अधिनियम 1872 धारा 130

निरंतर गारंटी - निरसन-गारंटर का दायित्व- धारणः बैंक और गारंटर के बीच हुआ समझौता स्पष्ट रूप से प्रदान करता है कि निरंतर गारंटी चलत प्रक्रति की होगी एवं वाद के लेन-देन के संबंध में परिचालन में रहेगी- समझौता वैध था इसलिए गारंटर द्वारा बैंक को गारंटी वापस लेने के लिए लिखा गया पत्र समझौते में गारंटी खंड के संदर्भ में कोई प्रभाव नहीं रखता है- इसलिए, उच्च न्यायालय ने उचित रूप से अभिनिर्धारित किया कि गारंटर अधिनियम की धारा 130 के प्रावधानों का लाभ का दावा नहीं कर सकता- उसके द्वारा निरंतर गारंटी का प्रतिसंहरण की धारा 130 भारतीय संविदा अधिनियम का लाभ माफ कर दिया गया था।

वह प्रश्न जो इस अपील में विचार हेतु उठाया गया था की धारा 130 भारतीय संविदा अधिनियम के वैधानिक प्रावधान के अस्तित्व में होते हुए उच्च न्यायालय द्वारा पारित किया गया यह निर्णय कि अपीलार्थी- गारंटर अग्रिम ऋण राशि का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी था, जो ऋण बैंक द्वारा प्रतिवादी सं. 01 लगायत 04 को दिया गया था, जबकि गारंटर द्वारा प्रतिवादीगण को बैंक से ऋण का भुगतान होने से पूर्व ही गारंटी को रद्द कर दिया गया था एवं मुकदमा ऋण वसूली बाबत पूर्व में ही दायर किया जा चुका था।

याचिका खारिज करते हुए उच्च न्यायालय ने निर्णीत किया कि-

1.1 उच्च न्यायालय यह अभिनिर्धारित करने में पूरी तरह से उचित था कि अपीलार्थी डिक्रीटल राशि का भुगतान बैंक को करने के लिए उत्तरदायी था चूंकि समझौते में गारंटी का खण्ड अंकित था। गारंटी के समझौते में स्पष्ट रूप से यह प्रावधान है कि गारंटी एक निरंतर गारंटी होगी और इसे रद्द नहीं माना जाएगा एवं किसी भी तरह से इस तथ्य से प्रभावित नहीं माना जाएगा कि किसी भी समय, उक्त खाते उधारकर्ता के खिलाफ कोई दायित्व नहीं दिखा सकते हैं या उसके पक्ष में कोई क्रेडिट भी दिखा सकते हैं, उक्त गारंटी बाद के सभी लेन-देन के संबंध में परिचालन में रहेगी। यह अपीलार्थी द्वारा बैंक के साथ किया गया एक समझौता था, जो उस पर बाध्यकारी है। (Para-6) [641-E-H]

1.2 समझौते को गैरकानूनी नहीं कहा जा सकता है और न ही पक्षकारान ने विचारण न्यायालय व उच्च न्यायालय के समक्ष यह आरोप लगाया है कि समझौता गैरकानूनी है। इसलिए अपीलार्थी द्वारा बैंक के साथ किया गया गारंटी समझौता वैध था। (Para-6) [642-A-B]

1.3 उच्च न्यायालय ने सही अभिनिर्धारित किया है कि अपीलार्थी भारतीय अनुबंध अधिनियम की धारा 130 के तहत लाभ का दावा नहीं कर सकता क्योंकि उसने बैंक के साथ गारंटी के समझौते में प्रवेश करके लाभ माफ कर दिया था। (Para-7) [642-B-C]

श्री लच्छू मल बनाम श्री राधे श्याम, (1971) 1 SCC 619; बृजेन्द्र नाथ भार्गव एवं अन्य बनाम हर्ष वर्धन और अन्य (1988) 1 SCC 454 और बैंक ऑफ इंडिया एवं अन्य बनाम ओ.पी.स्वर्णकार और अन्य। (2003) 2 SCC 721

हैल्सबरीज लॉज ऑफ इंग्लैण्ड, Vol. 8,3rd Edn.- संदर्भित किया गया।

1.4 अपीलार्थी ने स्पष्ट रूप से सहमति व्यक्त की थी कि उसने बैंक के साथ जो गारंटी दी थी वह एक सतत गारंटी थी और इसे बाद के सभी लेनदेन के लिए जारी रखा जाना था। उपरोक्त तरीके से समझौते में प्रवेश करने के बाद, यह अपीलार्थी को यह कहने का अधिकार प्राप्त नहीं था कि अधिनियम की धारा 130 के मद्देनजर, चूंकि प्रतिवादी नंबर 1 लगायत 4 व 6 को ऋण देने से पहले गारंटी अपीलार्थी द्वारा रद्द कर दी गई थी। वह बैंक को गारंटर के रूप में डिक्रीटल राशि का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी नहीं था चूंकि उसकी गारंटी पहले ही रद्द हो चुकी थी। (Para-8) [643-A-C]

1.5 यद्यपि अपीलार्थी द्वारा बैंक को उसके द्वारा दी गई गारंटी वापस लेने के लिए पत्र लिखा भी गया हो, उक्त पत्र गारंटी के समझौते के खंड के विपरीत था। इसलिए, अपीलार्थी के लिए गारंटी को रद्द करना संभव नहीं था क्योंकि अपीलार्थी गारंटी को जारी रखने के लिए सहमत हो गया था और उक्त गारंटी के नियमों और शर्तों से बंधा हुआ था। (Para-8) [643-E-F]

सिविल अपीलय क्षेत्राधिकारः 2008 सिविल अपील सं. 1878

दिल्ली उच्च न्यायालय, नई दिल्ली के अंतिम निर्णय और आदेश दिनांक 11.05.2006 के 1985 के आर.एफ.ए. संख्या 71 से

ऋषि माहेश्वरी, आर.के. माहेश्वरी और राज कुमार कौशिक अपीलार्थी की ओर

ध्रुव मेहता, यशराज सिंह दियोरा एवं हर्षवर्धन झा (मैसर्स के.एल. मेहता एण्ड कंपनी के लिए) उत्तरदाता की ओर से

न्यायालय का निर्णय इनके द्वारा सुनाया गया था

तरूण चटर्जी, J.

1. अनुमति दी गई।

2. यह अपील दिल्ली उच्च न्यायालय, नई दिल्ली द्वारा 1985 के आरएफए नंबर 71 में पारित अंतिम निर्णय व डिक्री दिनांक 11 मई, 2006 से उत्पन्न हुई, जिसके तहत उच्च न्यायालय ने अतिरिक्त जिला और सत्र न्यायाधीश द्वारा पारित 12 नवंबर, 1984 के फैसले और डिक्री को खारिज कर दिया था, मुताबिक जिसके अपीलार्थी के खिलाफ मुकदमा दायर किया गया जो पंजाब नेशनल बैंक [संक्षेप में 'बैंक'] द्वारा निम्न प्रतिवादी को दिए गए ऋणों के संबंध में गारंटर था - (प्रतिवादी नंबर 1) मेसर्स रंगा ट्रेड्स एंड एक्सपोर्ट्स प्राइवेट लिमिटेड - इस अपील में प्रतिवादी संख्या 2 आक्षेपित निर्णय द्वारा, उच्च न्यायालय ने अतिरिक्त जिला एवं सत्र न्यायाधीश के निर्णय की पुष्टि की और माना कि बैंक द्वारा दायर वाद को मूल प्रतिवादी संख्या 1 से 4 के खिलाफ 42,874/- रुपये की राशि के मुकदमा दायर करने की तारीख से वसूली तक त्रैमासिक अंतराल के साथ 19.5 प्रतिशत प्रतिवर्ष के ब्याज सहित डिक्री किया जाना चाहिए। इस स्तर पर हम यह नोट कर सकते हैं कि उक्त डिक्री प्रतिवादी संख्या 1 से 4 के विरुद्ध अब अंतिम हो गई है क्योंकि उक्त प्रतिवादी संख्या 1 से 4 द्वारा कोई अपील प्रस्तुत नहीं की गई थी। उक्त डिक्री के विरूद्ध उच्च न्यायालय के उपरोक्त फैसले से व्यथित होकर गारंटर अपीलार्थी द्वारा यह विशेष अनुमति याचिका दायर की गई है जिसके संबंध में अनुमति पूर्व में ही दी जा चुकी है।

3. अपीलार्थी की ओर से उठाया गया एकमात्र प्रश्न यह था कि भारतीय अनुबंध अधिनियम, 1872 (संक्षेप में अधिनियम) की धारा 130 के तहत वैधानिक प्रावधान के मद्देनजर, क्या उच्च न्यायालय का यह मानना उचित था कि अपीलार्थी जो प्रतिवादी संख्या 1 से 4 को बैंक द्वारा दिए गए ऋण का गारंटर था, इस आधार पर डिक्रीटल राशि का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी था कि अपीलार्थी ने प्रतिवादी संख्या 1 से 4 को वास्तव में ऐसे ऋण का भुगतान होने एवं उक्त ऋण की वसूली बैंक द्वारा प्रतिवादीगण के विरुद्ध दावा पेश करने से पूर्व ही गारंटी रद्द कर दी थी।

4. अपीलार्थी के विद्वान वकील द्वारा उठाए गए प्रश्न पर निर्णय लेने के लिए, हम गारंटर के रूप में अपीलार्थी के साथ बैंक द्वारा किए गए गारंटी समझौते पर गौर कर सकते हैं, जो इस प्रकार है:

"गारंटर एतद्द्वारा संयुक्त रूप से और अलग-अलग गारंटी देते हैं कि उनके द्वारा बैंक को उक्त सीमा के संबंध में खोले गए खातों पर देय सभी मूलधन, ब्याज, लागत, शुल्क और खर्च का भुगतान करना होगा और जो किसी भी समय उधारकर्ता से बैंक को देय हो सकता है। (इसके बाद 'उक्त खातों' कहा जाता है) भुगतान की तारीख तक और सभी हानि या क्षति, लागत, शुल्क और व्यय और कानूनी लागत के मामले में, वकील और ग्राहक के बीच चूक, विफलता के कारण बैंक को हुई लागत या उधारकर्ता या गारंटर या उनमें से किसी द्वारा ऐसे भुगतान में अस्थायी या अन्यथा डिफ़ॉल्ट, जिसमें प्रवर्तन की लागत (जैसा कि पूर्वोक्त) या सूट द्वारा भुगतान के प्रवर्तन का प्रयास या अन्यथा या बिक्री या वसूली या बिक्री या वसूली का प्रयास शामिल है, उक्त ऋणग्रस्तता के लिए किसी भी सुरक्षा या अन्यथा किसी भी तरह या किसी भी लागत (जिसकी लागत पूर्वोक्त के अनुसार होगी) शुल्क या व्यय जो बैंक किसी भी कार्यवाही में शामिल होने पर खर्च कर सकता है जिसमें बैंक पक्षकार बनाया जा सकता है या खुद को पार्टी बना सकता है या ऐसी किसी प्रतिभूति या उसकी किसी आय के संबंध में।

गारंटर इसके द्वारा घोषणा करते हैं कि यह गारंटी एक सतत गारंटी होगी और इसे रद्द नहीं माना जाएगा या किसी भी तरह से इस तथ्य से प्रभावित नहीं किया जाएगा कि किसी भी समय उक्त खाते उधारकर्ता के खिलाफ कोई दायित्व नहीं दिखा सकते हैं या उसके पक्ष में कोई क्रेडिट भी दिखा सकते

हैं लेकिन बाद के सभी लेनदेन के संबंध में गारंटी बनी रहेगी और परिचालन में रहेगी।" (इस बात पर जोर दिया गया)

गारंटी के समझौते को ध्यान में रखते हुए, जैसा कि ऊपर बताया गया है, वर्तमान मामले के तथ्यों पर गौर किया जाना है। यह एक स्वीकृत स्थिति है कि अपीलार्थी द्वारा बैंक को जारी की गई गारंटी को बाद में बैंक के प्रबंधक को लिखे गए उनके पत्र दिनांक 31 जुलाई, 1980 द्वारा रद्द कर दिया गया था और मामले के उस दृष्टिकोण में अपीलार्थी ने अपने मामले को साबित करने की मांग की। चूंकि उसकी गारंटी वास्तव में प्रतिवादियों द्वारा बैंक से ऋण लेने से पहले ही रद्द कर दी गई थी, की अधिनियम की धारा 130 के मद्देनजर, (प्रतिवादियों के संबंध में अपीलार्थी गारंटर था), वह प्रतिवादीगण द्वारा लिए गए ऋण का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी नहीं था। विचारण न्यायालय ने जैसा कि ऊपर बताया गया है, अपीलार्थी के खिलाफ मुकदमा खारिज कर दिया और बैंक की अपील में, उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय द्वारा पारित डिक्री को पलट दिया था और बैंक के पक्ष में और अपीलार्थी के विरुद्ध डिक्री प्रदान की गई। अपीलार्थी द्वारा गारंटी रद्द करने के बाद, प्रतिवादी संख्या 1 से 4 और 6 और बैंक के बीच ऋण के संबंध में लेनदेन हुए। अपीलार्थी के साथ-साथ अन्य प्रतिवादी संख्या 1 से 4 और 6 के खिलाफ बैंक द्वारा ऋण की वसूली के लिए मुकदमा दायर किया गया था।

5. अपीलार्थी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने अधिनियम की धारा 130 पर यह तर्क दिया कि इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि धारा 130 स्पष्ट रूप से लेनदार को नोटिस द्वारा भविष्य के लेनदेन के लिए जारी गारंटी को रद्द करने का प्रावधान प्रदान करत है और जैसा कि वर्तमान मामले में है, गारंटी को ऋण देने एवं मुकदमा दायर करने के बहुत पहले अपीलार्थी द्वारा रद्द कर दिया गया था। अतः अपीलार्थी बैंक को डिक्रीटल राशि का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी नहीं था।

तदनुसार, उन्होंने प्रस्तुत किया कि विचारण न्यायालय के फैसले को उलटने और अपीलार्थी के खिलाफ मुकदमे पर फैसला देने में उच्च न्यायालय उचित नहीं था। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता के इस तर्क का बैंक की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री ध्रुव मेहता ने गंभीरता से विरोध किया। श्री मेहता के अनुसार, जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, अपीलार्थी के लिए विद्वान अधिवक्ता के तर्क को गारंटी के समझौते के खंड के मद्देनजर स्वीकार नहीं किया जा सकता है। इससे पहले कि हम आगे बढ़ें और हमारे सामने पार्टियों की ओर से किए गए प्रस्तुतीकरण पर निर्णय लेने के लिए, अधिनियम की धारा 130 को पुनः प्रस्तुत करना उचित होगा, जो निम्नानुसार है:

> "चलत प्रत्याभूमि का प्रतिसंहरण किसी भी समय जारी गारंटी की भविष्य के लेन-देन के संबंध में लेनदार का नोटिस देकर जमानत द्वारा रद्द किया जा सकता है।"

6. हमारे द्वारा पक्षकार की ओर से की गई प्रस्तुतियों और गारंटी समझौते के प्रासंगिक खंडों की सावधानीपूर्वक जांच की गई है। हमारे विचार में, उच्च न्यायालय का यह मानना पूरी तरह से उचित था कि अपीलार्थी गारंटी के समझौते में ही, जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, खंड के मद्देनजर बैंक को डिक्रीटल राशि का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी था। गारंटी का समझौता स्पष्ट रूप से प्रदान करता है कि गारंटी एक सतत गारंटी होगी और इसे रद्द नहीं माना जाएगा या किसी भी तरह से इस तथ्य से प्रभावित नहीं किया जाएगा कि किसी भी समय, उक्त खाते उधारकर्ता के खिलाफ कोई दायित्व नहीं दिखा रहे हैं या क्रेडिट भी दिखा रहे हैं किंतु बैंक के पक्ष में गारंटी बनी रहेगी और बाद के सभी लेनदेन के संबंध में परिचालन में रहेगी। यह अपीलार्थी द्वारा बैंक के साथ किया गया एक समझौता था, जो उस पर बाध्यकारी है। इसलिए यह प्रश्न उत्पन्न होना कि क्या अधिनियम की धारा 130 के तहत वैधानिक प्रावधान गारंटी

के समझौते को खत्म कर देगा। हमारे दृष्टिकोण के अनुसार, समझौते को गैरकानूनी नहीं कहा जा सकता है और न ही पक्षकारों ने विचारण न्यायालय या उच्च न्यायालय के समक्ष समझौते के गैरकानूनी होने का आरोप लगाया है इसलिए हमें यह ध्यान में रखना चाहिए कि अपीलार्थी द्वारा बैंक के साथ किया गया गारंटी समझौता वैध था।

7. प्रश्न यह है कि क्या अपीलार्थी ने बैंक के साथ गारंटी का ऐसा समझौता करके अधिनियम के तहत अपने अधिकार को त्याग दिया है। हमारे विचार में, उच्च न्यायालय ने सही निर्णय लिया है एवं हमारा भी मानना है कि अपीलार्थी अधिनियम की धारा 130 के तहत लाभ का दावा नहीं कर सकता क्योंकि उसने बैंक के साथ गारंटी के समझौते में प्रवेश करके लाभ को माफ कर दिया था। श्री लच्छू मल बनाम श्री राधे श्याम, [(1971) 1 एससीसी 619], इस न्यायालय ने देखा कि सामान्य सिद्धांत यह है कि हर किसी को लाभ और संरक्षण के लिए बनाए गए कानून या नियम का अपनी निजी क्षमता में बिना किसी भी सार्वजनिक अधिकार या सार्वजनिक सिद्धांत का उल्लंघन किए बिना लाभ माफ करने और माफ करने के लिए सहमत होने का अधिकार है। हैल्सबरीज़ लॉज़ ऑफ़ इंग्लैंड, Vol. 8, 3rd संस्करण में पृष्ठ 143 पर पैरा 248 में निम्नानुसार कहा गया है:

> "एक सामान्य नियम के रूप में, कोई भी व्यक्ति संसद के अधिनियम द्वारा उसे दिए गए लाभों को माफ करने के लिए एक बाध्यकारी अनुबंध में प्रवेश कर सकता है, या जैसा कि कहा जाता है, वह खुद को अधिनियम से बाहर कर सकता है, जब तक कि यह नहीं दिखाया जा सके कि ऐसा कोई समझौता विशेष मामले की परिस्थितियों में सार्वजनिक नीति के विपरीत है। हालाँकि, वैधानिक शर्तें ऐसी शर्तों पर लगाई जा सकती हैं कि उन्हें समझौते द्वारा माफ नहीं किया जा सकता है, और, कुछ परिस्थितियों में, विधायिका

ने स्पष्ट रूप से प्रदान किया है कि ऐसा कोई भी समझौता शून्य होगा।"

(इस बात पर जोर दिया गया)

बृजेंद्र नाथ भार्गव एवं अन्य बनाम हर्षवर्धन एवं अन्य [(1988) 1 एस.सी.सी. 454], पृष्ठ 461 के पैरा 10 में यह प्रतिपादित किया गया है कि यदि किसी पक्ष ने कानून के पद पर मिलने वाले लाभ को छोड़ दिया है, तो उसके लिए यह बदलना और यह कहना संभव नहीं है कि वह ऐसा लाभ प्राप्त कर सकता है। बैंक ऑफ इंडिया एवं अन्य बनाम ओ.पी.एस. स्वर्णकार एवं अन्य [(2003) 2 एस.सी.सी. 721] में भी इसी सिद्धांत का पालन किया गया है।

8. इस सिद्धांत को ध्यान में रखते हुए, अब हम गारंटी के समझौते में खंड को देखते हैं, जैसा कि यहां पहले उल्लेख किया गया है। इसमें कोई विवाद नहीं है कि अपीलार्थी स्पष्ट रूप से सहमत था कि उसने बैंक के साथ जो गारंटी दी थी वह एक सतत गारंटी थी और उसे बाद के सभी लेनदेन के लिए जारी रखा जाना था। उपरोक्त वर्णित समझौते में प्रवेश करने के बाद हमारे विचार में अधिनियम की धारा 130 के मद्देनजर, अपीलार्थी के लिए पलटना और यह कहना संभव नहीं था, क्योंकि प्रतिवादी संख्या 1 से 4 और 6 को ऋण देने से पहले गारंटी रद्द कर दी गई थी, अपीलार्थी बैंक को गारंटर के रूप में डिक्रीटल राशि का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी नहीं था क्योंकि उसकी गारंटी पहले ही रद्द कर दी गई थी। मामले के इस दृष्टिकोण में, हम अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता के तर्कों को स्वीकार करने की स्थिति में नहीं हैं और हमारा मानना है कि अपीलार्थी द्वारा बैंक के साथ की गई गारंटी की प्रकृति को देखते हुए, धारा 130 के तहत वैधानिक प्रावधान अधिनियम उसकी सहायता के लिए नहीं आएगा। पहली अपील पर निर्णय लेते समय उच्च न्यायालय ने निष्कर्ष दिया था कि अपीलार्थी और प्रतिवादीगण के खिलाफ बैंक के खातों में दिखाई गई राशि न तो प्रतिवादीगण द्वारा और न ही अपीलार्थी द्वारा चुकाई गई थी। इसलिए, भले ही अपीलार्थी

द्वारा 31 जुलाई, 1980 को बैंक को उसके द्वारा दी गई गारंटी वापस लेने के लिए एक पत्र लिखा गया था, यह गारंटी के समझौते के खंड के विपरीत था, जैसा कि यहां पहले उल्लेख किया गया है। इसलिए, अपीलार्थी के लिए गारंटी को रद्द करना संभव नहीं था क्योंकि अपीलार्थी गारंटी को जारी रखने के लिए सहमत हो गया था और उक्त गारंटी के नियमों और शर्तों से बंधा हुआ था। इस कारण से, अपीलार्थी के लिए विद्वान अधिवक्ता के तर्कों को स्वीकार करना मुश्किल है कि अधिनियम की धारा 130 के तहत वैधानिक प्रावधान के मद्देनजर, अपीलार्थी द्वारा गारंटी रद्द करने के बाद, वह बैंक की डिक्रीटल राशि का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी नहीं था। अपीलार्थी के विद्वान वकील द्वारा कोई अन्य मुद्दा नहीं उठाया गया। तदनुसार, इस अपील में कोई योग्यता नहीं है। अतः अपील खारिज की जाती है। लागत के रूप में कोई आदेश नहीं होगा।

अपील खारिज की गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी कृतिका शेखावत (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।